श्री रत्नप्रभाकर ज्ञान पुष्पमाला पुष्प नं. ९८

ॐ

# श्री समवसरण प्रकरण.

卐

ले०—मुनीश्री ज्ञानसुंदरजी.

जन्म वि० सं. १९३७ विजयदशमी.

जैन दीक्षा वि० सं. १९७२

स्थानकवासी दीक्षा वि० सं. १९६३

**मुनिराज श्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज।**

आनंद प्रि. प्रेस–भावनगर.

लोहावटसे प्राप्त.

श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला पुष्प नं. ९८

श्रीमद्रत्नविजयसद्गुरुभ्यो नमः

अथश्री

# समवसरण प्रकरण.

( हिन्दी अनुवाद )

लेखक

मुनि श्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज.

द्रव्य सहायक

शाहा जीवराज मोहनलाल.

मु. वाली. ( मारवाड )

प्रकाशक.

श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला.

ओफीस फलोदी ( मारवाड )

वीर सं० २४५५ विक्रम सं० १९८५

प्रथमावृति १००० ओसवाल संवत् २३८५

# धन्यवाद.

श्रीमती केशरबाईने अपने स्वर्गस्थ धर्मपति सहसमलजी के स्मरणार्थ फागण शुद ११ से चैत वद ३ तक अठाई महोत्सव—समवसरण कि दिव्य रचना और शान्ति स्नात्रादि महोत्सव करवा के इस समवसरण प्रकरण मुद्रित करवाने में द्रव्य सहायता प्रदान कर अनंत पुन्योपार्जन किया है इस वास्ते हम सहर्ष श्रीमती केसरबाई को धन्यवाद देते हैं और भी सज्जनों को हम इस पवित्र कार्यों का अनुकरण करने का अनुरोध करते है कि लक्ष्मी की चञ्चलता समझ के ऐसे सद्कार्योंमें अपनी लक्ष्मी को अमर बनाना चाहिये किमधिकम्

"प्रकाशक"

# वाली के वर्तमान।

वाली एक गोडवाडमें अच्छा आबाद और प्रख्यात कस्बा है। जहां राज महकमें—हकुमत, हवाला, सायर, जङ्गलात, पुलिस, अस्पताल, स्कूल, और पोष्ट वगेरह का खास इन्तजाम है। आस-पास के गामों के लोगों के गमनागमनसे गांव की आबादीमें और भी वृद्धि दिखाई दे रही है। इस कस्बे में कृषक विशेष हैं और व्यापार की हालत साधारण है।

वाली सहर तीन जिनमंदिर, महात्माओं की पोसालों, अनेक धर्मशालाओं और गांव के बहार बाग बगिचियों से सुशोभित है।

इस समय पूज्यपाद प्रातःस्मरणीय मुनि श्री श्री १००८ श्री श्री ज्ञानसुंदरजी, गुणसुंदरजी महाराज के पधारनेसे जनतामें, धर्मजा-गृति और उत्साह दिन व दिन बढता जा रहा है। आपश्री के व्याख्यान की छटा और समझाने की शैली अलौकिक ही है, फिर भी समाज सुधारपर आप का अधिक लक्ष है आप खूब जोर देकर फरमाते हैं कि जैन धर्म एक वीरों का धर्म है, और उन्होंने ही जैन धर्म का रक्षण पोषण कर उन्नति की थी, अतएव आप लोगों को भी चाहिए कि आप अपने शरीर स्वास्थ्य के रक्षण द्वारा वीर बन जैन धर्म को पूर्ण श्रद्धा विश्वासपूर्वक पालन करें। आपश्रीके उपदेश का प्रभाव भी जनतापर काफी पडता है, कारण अव्वल तो आप श्रीमान्

हमारी मरूभूमि के ही हैं, दूसरे हमारे आचार व्यवहार, रहन सहन, और कुप्रथा—कुरूढियोंसे आप पूर्णतया परिचित है। तीसरा जनता के चिरकाल का रोग मिटाने के लिए मधुर, और कटूक औषधियों भी आप के पास कम नही है; और उनको अनुपान के साथ देने की तजवीज भी आप भली भान्ति जानते हैं। अतएव आप श्री के उपदेशरूपी दवा भव्यात्माओं रूपी मीरजों को इतनी शीघ्र असर करती है कि वाली में आप का कोई भी उपदेश निष्फल नहीं गया है थोडे बहुत प्रमाण में जनतापर जरूर असर हुआ है। जैसेः—

(१) महाजनों के घरों में पाणी के वर्तनोपर सरवे न होनेसे झूठे पाणी और असंख्य प्राणियों के पाप में डूबते हुओं को विमुक्तकर दिए, अर्थात् गांव के लोगोंने सरवे करवा लिए।

(२) मृत्यु के पीछे किए हुए जिमणवारों ( औसरों ) में जीमने का भी बहुत लोगोंने परित्याग किया है।

(३) गोडवाड की औरतों व लडकियों गोबर लाने को जाने में अपना बडा भारी गौरव समझती हैं पर आपश्री के उपदेशने तो उनको भी बन्द करवा दिया।

(४) लग्न प्रसंग में महाजनों की बहन बेटियों मैदानमें ढोलपर नाचती है और ऐसे प्रसंगपर असभ्य गालियों गाया करती हैं उसका भी बहुत सी बहनोंने प्रत्याख्यान किया है।

(५) व्याख्यानमें श्री रायप्पसेनीजी सूत्र वंचना प्रारंभ

हुआ उस समय स्वर्णमुद्रिका, रूपैये, और श्रीफलादि से ज्ञान पूजा हुई; और ज्ञानमें आवंद भी अच्छी हुई।

(६) माघ शुक्ल पूर्णिमा के दिन ओसवंश स्थापक आचार्य श्री रत्नप्रभसूरिजी महाराज की जयन्ति होनेसे पब्लिक सभा, पूजा प्रभावना, और वरघोडा बडे समारोह के साथ निकला था।

(७) वाली में मुस्लमानों के सांई ( काटिया ) के वहां का दूध प्रायः सब गांववाले मूल्य देकर लाते थे, और खाते पीते थे, यह कतई बन्दकर दिया गया है। इतना ही नहीं परन्तु किसनलाल हलवाईने भी मुस्लमानों का दूध नहीं लाने की प्रतिज्ञा कर ली हैं।

(८) रेस्मी कपडे जो असंख्य कीडों से बनते हैं, उन को पहिनना लोगोंने बंद कर दिया। इनके सिवाय और भी बहुत सी बातों का सुधारा हुआ है, अब इन को वाली की जैन जनता कहां तक पालन करेगी; यह हम निश्चय रूपसे नहीं कह सक्ते।

आपश्री के विराजने के दरम्यान होली का आगमन हुआ, इस अवसरपर आपश्रीने फरमाया कि छः सास्वती अट्ठाइयों में फाल्गुण अट्ठाई भी एक है, जो फाल्गुण सुद ८ से पूर्णिमा तक रहती है। अगर इस अट्ठाई का अच्छा महोत्सव किया जाय तो होली जैसे मिथ्या पर्व में अनेक जीव कर्मबन्ध करते हैं वह सहज ही में रुक जावे।

इस बात का बीडा भभूतमल रायचंदजीने उठाया कि मैं इस बात की दलाली करूंगा, बाद जैसा उसने कहा था वैसा ही करके

बतलाया कि शाह सहसमलजी आसूजी की धर्मपत्नी केसरबाईने अट्ठाई महोत्सव का सब भार अपने उपर लेनेका वचन दिया जो कि केवल पांचसो सातसो रूपयों का खर्च था। तत्पश्चात् महाराजश्री का उपदेश होता गया और श्रीमती केशरबाई की भावना बढती गई यहां तक की अट्ठाई महोत्सव के साथ २ समवसरण की रचना, शान्तिस्नात्र पूजा, और महोत्सव के आखिर दिन स्वामिवात्सल्य करना भी स्वीकार कर लिया। इस कार्य में विशेष सहायता हंसराज व भभूतमल रायचंदजी तथा केशरबाई के भाई प्रेमचंद नथूजी लूणावावाला और इनके निज कुटुम्बी अनोपचंदजी गजाजी तथा भीखमचंदजी और दानमलजी जीवराज विगेरह और इनके जरीए ही सरू से आखिर तक सफलता मिली थी।

जूने मंदिरजीमें पावणारूप विराजमान चार मूर्तियों का माप लेकर समवसरण की दिव्य रचना की गई, जैसे तीन गढ उनपर कांगरे, दरबाजे, तोरण, सिंहासन, अशोकवृक्ष, ध्वज, और बारह प्रकार की परिषदासे, मानों खास समवसरण का ही प्रतिबिम्ब दिखाई दे रहा था। रंगमण्डप की भव्य रचना स्वर्ग की स्मृति करा रही थी और कांच के झाड हांडियों गोले बडे २ ऐनक (काच) तथा जैनाचार्य श्री मद्विजयानन्द सूरिजी, श्रीविजयवल्लभ सूरिजी पन्यासजी ललितविजयजी और मुनि ज्ञानसुंदरजी आदि महात्माओं की तस्वीरों उस मण्डप की सुन्दरता में और भी वृद्धि तथा दर्शकों के चित्तको अपनी ओर आकर्षित कर रही थी।

समवसरण और शान्तिस्नात्र पूजा की विधी विधान के लिए

श्रीमान् यतिवर्य प्रेमसुंदरजी फलोदीवाले और जसवन्तसागरजी मुंडा-रावाले को सादर आमंत्रण देकर बुलाए थे, आप की शासनसेवा और शांतवृतिने जनता पर अच्छा प्रभाव डाला था.

फाल्गुण शुक्ल ११ को समवसरण में भगवान की स्थापना करने का शुभ मूहुर्त था। जूने मंदिर की मूर्तियों न मिलने पर सर्व धातमय प्राचिन चौबिसियों और पंच तिर्थियों एवं चार प्रतिमाजी को बडे ही समारोह के साथ स्थापना करके अट्ठाई महोत्सव प्रारंभ कर दिया गया। नौपतखाने और बेंड (अंग्रेजी) वाजोंने इतना गुलसोर मचाया कि एक बाली के जैन जैनेतर तो क्या पर आस-पास के गांवों के लोगों को मानों आमन्त्रण ही कर रहे थे जिस के जरिए संख्याबद्ध लोग समवसरण स्थित प्रभु दर्शन कर अपने सरल हृदय की उज्वल भावना से जैनधर्म की जयध्वनी के साथ परमानन्दको प्राप्त हो रहे थे।

रात्री समय रोशनाई और भक्ती का इतना तो ठाठ लग रहा था कि विशाल धर्मशाला होनेपर भी लोगों को बैठने को तो क्या पर खडा रहेने के लिए भी जगह नही मिलती थी, इस लिए प्रभु दर्शन के लिए बहुत से आगत सज्जनों को कुछ देर बहार ठहरना पडता था.

इस सु अवसर पर श्रीमान् हाकिम साहब आदि राज्य कर्मचारियोंने भी समवसरण के दर्शन कर अपनी उदारता का परिचय दिया था।

हम बाली के जैन स्वयंसेवकों की सेवाको भी नहीं भूल सक्ते कि जिन्होंने तन तोड कर समाज सेवा का अमूल्य लाभ प्राप्त किया था।

समवसरण के दर्शनार्थी गामान्तर से पधारे हुए स्वधर्मी भाइयों का स्वागत ( भोजन वगेरह से ) निम्नलिखीत सद्गृहस्थों की तरफ से हुआ था:—

फाल्गुन सुद १२ शाम को साह कसनाजी देवाजी के वहां
,, ,, १३ सुबह शाह रामचंदजी तारूजी के ,,
,, ,, १३ शाम को साह खुसालजी धूलाजी के ,,
,, ,, १४ सुबह शाह निहालचंदजी श्रीचन्दजीके ,,
,, ,, १४ शाम को शाह भीखाजी दलाजी के ,,
,, ,, १५ सुबह शाह समरथमलजी मेंघराजजीके,,
,, ,, १५ शामको मुलतानमलजी सागरमलजीके ,,
चैत्र वद १ सुबह शाह प्रेमचंदजी गोमाजी के वहां
,, ,, १ शाम को शाह जीवराजजी हजारीमलजी के वहां

पर विशेषता यह थी कि आपकी तरफ से पावणो के साथ गांव स्वामिवात्सल्य भी हुआ था।

चैत्र वद २ सुबह शाह टेकचंदजी भूताजी के वहां
,, ,, २ शाम को शाह भूताजी कस्तूरचंदजी के वहां

,, ,, ३ सुबह शाह सहसमलजी आसूजी समवसरण रचानेवालों की तरफसे

चैत्र वद ३ शाम को भी शाह सहसमलजी आसुजी के वहां पावणो के साथ गांव स्वामीवात्सल्य था।

गोडवाड में करबा की भी प्रथा है, जो दहीके अंदर चावल बादाम, दाखें, इलायची वगेरह डाल कर के अच्छा स्वादिष्ट बनाया जाता है मिष्टान्न जीमने वालों के लिए यह हाजमी पदार्थ और भी फायदेमंद है इस महोत्सव में पधारे हुए महेमानों के लिए शाह अजेराजजी कोठारी और वजेराजजी गैमावत की तर्फसे करबा का स्वागत हुआ था।

समवसरण के महोत्सव दरम्यान ४ वरघोडा मय बेंड बाजा और नक्कार निशान के साथ बडे ही धामधूम के साथ चढाए गए थे जिस की भव्य सुन्दरता और जन संख्या का फोटू भी लिया गया था।

वरघोडा में पधारनेवाले स्वधर्मी भाइयों का स्वागत निम्नलिखीत सज्जनोंने ठंडाई मसाला और सर्करा के पाणी से किया था—

( १ ) साह भूताजी रायचंदजी ( २ ) साह सरदारमलजी मगनाजी। ( ३ ) शाह गुणेसमलजी जोराजी तथा नवलाजी चमनाजी ( ४ ) शाह जबरमलजी पूनमचंदजी

चैत्र वद ३ के दिन को सुबह चैत्य महा पूजा हुई, जिस में शाह सहसमलजी आसूजी के वहां से स्वर्ण मुद्रिका तथा शेठजी

कपूरचंदजी लक्ष्मीचंदजी के वहां से स्वर्ण मुद्रिका और सज्जनों की ओर से सुवर्ण और मुक्ताफल के स्वस्तिक और रूपये श्रीफलों से पूजा हुई करीबन् ३९०) की आमंद हुई जिस रकम का कलश करवाना श्री संघ से ठहराव हुवा है । दो पहर को शान्तिस्नात्र पूजा बडे ही समारोह के साथ भणाई गई थी जैन जैनेतर लोगों से धर्म-शाला चक्कार बद्ध भर गई थी, कार्य बडी ही शांति पूर्वक हुआ । इस सुअवसरपर श्री संघकी ओर से नई बनाई इन्द्रध्वजा की प्रतिष्ठा छब्बीस मण घृत कीं बोली से शाह जबरमलजी मानमलजी की तरफ से हुई । अन्त में शाह गंगारामजी तारूजी के वहां से श्रीफल की प्रभावना पूर्वक सभा विसर्ज्जन हुई ।

इस महोत्सव के अंदर देवद्रव्य में करीबन् १५००) आमंद हुई । यह कार्य श्री संघकि सहायता से बड़े ही शान्ति, और धर्म—प्रेमके साथ हुआ था और गांवमें भी शांति का साम्राज्य वर्त गया था।

चैत्र वद ५ को मुनिश्रीजी, यतिवर्य, और सकल संघ श्री सेसली मण्डन प्रभु पार्श्वनाथकी यात्रा करी, यहां श्रीमती केशर-बाईकीं ओरसे पूजा प्रभावना हुई ।

इस पवित्र महोत्सव के कारण वालीमें ही नहीं पर आसपास के गांवोमें जैनधर्मकी खूब ही अच्छी प्रभावना हुई और समाजमें धर्म जागृति के साथ उत्साह बढ रहा है ।

चैत्र वद १२ के रोज श्रीमान् पन्यासजी श्री ललितविजयजी महाराज आदी मुनि और वरकाणा विद्यालय के विद्यार्थीमय मास्टरों के

करीबन् १२९ संख्या में पधार गए, पन्यासजी महाराज का नगर प्रवेश बड़े ही समारोहसे हुआ, और स्वधर्मियों का स्वागत (भोजन) सुबह साह जवाहरमलजी मानमलजी टीकायत के वहां, और शामको शाह गंगाराम ताराजी की ओर से हुवा था।

वालीमें कई असों से कुछ कुसम्प था जिसकी शान्ति के लिए दोनों पार्टी अर्थात् सब गांव वालों की सम्मतिसे एक इकरार नामा लिख कर मुनिश्रीको दिया है, कि जो आप श्रीमान् फैसला देंगे. वह हम सबको मंजूर है; उम्मेद है कि मुनिश्री जो फैसला देगा उसको सब गांव शिरोद्धार कर गांव में प्रेम एक्यता से कार्य कर शांति वरतावेंगे।

इस समय अधिष्ठायक देवकी वालीपर मेहरबानी है कि सब तरहसे आनंद मंगल वरत रहे है भविष्यके लिए ऐसे ही आनन्द मंगल की आशा करते हुए इस लेखकी समाप्त करता हुं। मैं एक परगांव का आदमी हूं, पूछने पर जितनी वातें मुझे मिली; यहां लिख दी हैं अगर इसमें कोई त्रुटी रही हो तो आप सज्जन क्षमा प्रदान करें। किमधिकम्।

श्री संघ सेवक,

समवसरणके दर्शनार्थी आया हुआ

**केसरिमल चोरडिया बीलाडावाला.**

# ॥ श्री तीर्थंकर भगवान. ॥

## तीर्थंकर नामकर्मोपार्जन करने के बीस स्थान।

(१) अरिहन्त (२) सिद्ध (३) प्रवचन (४) गुरु (५) स्थविर (६) बहुश्रुति (७) तपस्वी (८) ज्ञानी (९) दर्शन (१०) विनय (११) षडावश्यक (१२) निरतिचार व्रत (१३) उत्तमध्यान (१४) तपश्चर्या (१५) दान (१६) वैयावच्च (१७) समाधि (१८) अपूर्वज्ञान (१९) सूत्र सिद्धान्तकी भक्ति (२०) मिथ्यात्व को नष्ट करता हुवा शासनकी प्रभावना करना एवं वीस स्थान की सेवा-पूजा आराधना और अनुकरण करनेसे जीव तीर्थंकर नामकर्मोपार्जन करते है और तीसरे भवमें तीर्थंकर हो जगत् का उद्धार कर सक्ते है.

## तीर्थंकरोके पांच कल्याणक.

(१) चवण कल्याणक (२) जन्म कल्याणक (३) दीक्षा-कल्याणक (४) कैवल्य कल्याणक और (५) निर्वाण कल्याणक। तीर्थंकरो के कल्याणक के दिन धर्म कार्य करना विशेष फलदाता है.

## तीर्थंकर अष्टादश दोष रहित होते हैं.

(१) अज्ञान (२) मिथ्यात्व (३) अविरति (४) राग (५) द्वेष (६) काम (७) हास्य (८) रति (९) अरति (१०) भय (११) शोक (१२) दुगंच्छा (१३) निद्रा (१४) दानान्तराय (१५) ला-

भान्तराय (१६) भोगान्तराय (१७) उपभोगान्तराय (१८) वीर्यान्तराय इन अठारादोष विमुक्त हो वह ही देव समझना—

**तीर्थंकर भगवान् १२ गुण संयुक्त होते है.**

(१) अशोक वृक्ष (२) पुष्प वृष्टि (३) दिव्वध्वनि (४) चामरयुगल (५) स्वर्ण सिंहासन (६) भामण्डल (७) देवदुंदुभि (८) छत्रत्रय इनको अष्ट महाप्रातिहार्य कहते है.

(९) ज्ञानातिय ईसके प्रभावसे लोकालोक के चराचर भावोंको हस्तामलकी माफीक जान सके।

(१०) वचनातिशय ईसके प्रभावसे उनकी वाणि आर्य अनार्य पशु पाक्षी आदि सब पर्षदाएं अपनि २ भाषामें समझ के लाभ उठा सके।

(११) पूजातिशय—इसके प्रभावसे तीनलोकमें रहे हुवे देव मनुष्य विद्याधरादि सब पुष्पादि उत्तम पदार्थ से तीर्थंकरोंकी पूजा करते है।

(१२) अपायावगमातिशय-इसके प्रभावसे जहां २ आप विहार करते हैं वहां २ दौर्भिक्षादि किसी प्रकार का उपद्रव उत्पात नहीं होता है.

**तीर्थंकरोंके चौंतीस अतिशय—**

(१) प्रभुके रोम केश नखादि वृद्धि को प्राप्त नहीं होते है।

(२) प्रभु का शरीर निरोग रहता है।

(३) प्रभुके शरीर का खून गौदूध सदृश होता है।

(४) प्रभुका श्वासोश्वास कमल सदृश सुगंधित होता है।

(५) प्रभुका आहार निहार छद्मस्थ देख नहीं सक्ता,

(६) प्रभुके आगे धर्मचक्र चलता है.

(७) प्रभुके उपर छत्रत्रय रहता है.

(८) प्रभुके उपर चामरयुग उडते है.

(९) प्रभुके विराजने को रत्नसिंहासन होता है.

(१०) प्रभुके आगे इन्द्रध्वजा चलती रहती है,

(११) प्रभुके साथ अशोकवृक्ष रहता है.

(१२) प्रभुके साथ भामण्डल रहता है.

(१३) प्रभु जहां २ विचरते है वहां पचवीस २ योजन तक भूमि समान हो जाति है.

(१४) प्रभु जहां २ विचरते है वहां पचवीस २ योजन तक कांटे सीधे के ओंधे अर्थात् अधोमुख हो जाते है.

(१५) प्रभु जहां २ विचरते है वहां पचवीश २ योजन तक ऋतु अनुकुळ हो जाति है.

(१६) प्रभु जहां २ विचरते है वहां पचवीस २ योजन तक शितल मंद सुगंधि वायु से भूमि सुगन्धित हो जाति है.

(१७) प्रभु जहां २ विचरते है वहां पचवीस २ योजन तक जल से भूमि शुद्ध पवित्र हो जाति है.

(१८) प्रभु जहां २ विचरते है वहां घूटने प्रमाण देवता सुगन्धित पुष्पोंकी वृष्टि करते हैं.

(१९) ,, अशुभ वर्ण गन्ध रस और स्पर्श नष्ट हो जाते है.

(२०) ,, शुभवर्ण गन्ध रस और स्पर्श प्राप्त हो जाते है.

(२१) प्रभुकी वाणीं एक योजन तक सुनाई देती है.

(२२) प्रभु नित्य अर्ध मागधी भाषामें देशना देते है.

(२३) प्रभुकी भाषा का ऐसा अतीशय है कि आर्य–अनार्य पशुपात्ती आदि सब पर्षदाएं अपनी २ भाषामे बडी आसानी से समझ जाती है.

(२४) प्रभुके समवसरण में किसीको वैरभाव नहीं रहता है जो जातिवैर होता है वह भी छूट जाता है.

(२५) पर वादि प्रभुके पास आते है वह पहले शीष नमाते है.

(२६) शास्त्रार्थ में वादियों का पराजय होता है.

(२७) इतीरोग ( तीडादि का गिरना ) नहीं होता है.

(२८) मरी रोग ( प्लेग हैजादि ) नहीं होता है.

(२९) स्वचक्र ( राजा ) का भय नहीं होता है.

(३०) पर चक्र ( अन्य देश का राजा ) का भय नहीं होता है.

(३१) अतिवृष्टि ( अधिक वारिस ) नहीं होती है.

(३२) अनावृष्टि ( बहुत कमवारिस ) नहीं होती है.

(३३) दुर्भिक्ष दुष्काल नहीं पडता है.

(३४) इतीरोग से दुष्काल तक ७ अतिशय बतलाये है वह प्रभु विहार करे वहाँ पचवीस पचवीस योजन तक नहीं होते है अगर पहले हुवे हो तो भी प्रभुके पधारणे से नष्ट हो जाते है। यह सब बातें प्रभुके अतिशय के प्रभावसे हुआ करती है कारण उन्होंने पूर्व-भव में वीस स्थानक की आराधना कर ऐसे जबर्दस्त पुन्योपार्जन किये थे कि वह विपाक उदय आने पर पूर्वोक्त प्रभावशाली पुन्यकर्म भी उनको अवश्य भोगवना पडता है.

## प्रभुके समवसरण.

जिस स्थानपर तीर्थंकर भगवान् को कैवल्यज्ञान उत्पन्न होता है वहांपर तो देवता अवश्य समवसरण कि रचना करते है और भी जहांपर धर्मकी शिथिलता हो व मिथ्यात्व और पाखण्डियों का विशेष जोर शोर हो वहाँपर भी देवता समवसरण की रचना किया करते है जैसे भगवान आदिनाथ के शासनमें आठ समवसरण और परमात्मा महावीर प्रभुके शासनमें बारह समवसरण शेष २२ तीर्थंकरो के शासन में दो दो समवसरण एवं ८-१२-४४ मिलकर सब ६४ समवसरण हुवे थे।

## समवसरण रचना का फल—

समवसरण की रचना करनेसे देवता अनन्त पुन्योपार्जन करते है और उत्कृष्ट भावना आने से कभी २ तीर्थंकर नामकर्म भी

उपार्जन कर सकते है। अगर कोइ भी प्राणि उस समवसरण की अनुमोदना करे वह भी सम्यक्त्वरुपी रत्न प्राप्त कर अनन्त पुन्य हांसल कर सक्ता है इतना ही नहीं पर भवान्तर में तीर्थंकरों के समवसरण का लाभ भी ले सक्ता है।

## समवसरण प्रकरण

आवश्यक निर्युक्ति–वृत्ति–चूर्णि आदि शास्त्रोंमें समवसरण का खूब विस्तारसे वर्णन है पर बालबोध के लिये पूर्वाचार्योंने प्राकृत भाषामें एक छोटासा प्रकरण रच दिया पर उसका लाभ साधारण ले नहीं सक्ता. इस लिये उस का अनुवाद हिन्दी भाषामें बनाके हम हमारे पाठकों के करकमलोमें रखनेकी चिरकाल से अभिलाषा कर रहे थे. उस को आज सफल कर यह लघु प्रकरण आप सज्जनों की सेवामें अर्पण किया जाता है आशा है कि इस उत्तम ग्रन्थको आद्योपान्त पढके समवसरण की भावना रखते हुवे भवान्तरमें साक्षात् समवसरण का शीघ्र दर्शन करे यह हमारी हार्दिक भावना है.

## क्षमा की याचना.

छद्मस्थों के अन्दर अनेक त्रुटियोंका रहना स्वाभाविक बात हैं जिसमें भी मेरे जैसे अल्पज्ञ के लिये तो विशेष संभव है और मेरी मातृभाषा मारवाडी होनेसे उन शब्दों का विशेष प्रयोग आपके दृष्टिगोचर होगा तथापि हंस चंचुवत् गुण ग्रहन कर अनुचितकी क्षमाप्रदान करे यह मेरी याचना है। शम्।

२

# श्री समवसरण प्रकरण.

थुणिमो केवली वच्छं । वर विज्जाणंद धम्मतित्थं ।
देवींद नय पयत्थं । तित्थयर समवसरणत्थं ॥ १ ॥

भावार्थ—अनंतज्ञान अनंतदर्शन अनंतचारित्र और अनंतवीर्य रूप अभिन्तर लक्ष्मी तथा चौंतिस अतिशय व अष्ट महाप्रतिहार्यरूप बाह्यलक्ष्मी से विभूषीत, समवसरण स्थित धर्मतीर्थंकर धर्मनायक तीर्थंकर भगवान के चरणकमलो में देव देवेन्द्र अर्थात् भवनपति, व्यन्तर ज्योतीषी और वैमानिक देवोंके वृन्द और चौसठ इन्द्रोने अपना उन्नत मस्तक झूका के वन्दन नमस्काररूप भावपूजा तथा पुष्पादि उतम पदार्थों से करी है द्रव्यपूजा अर्थात् देव देवेन्द्र नर नरेन्द्र और विद्याधरों के समूह से परिपूजित ऐसे तीर्थंकर भगवान् को नमस्कार और स्तवना कर मैं भव्य जीवों के हितार्थ समवसरण का संक्षिप्त वर्णन—स्वरूप को कहूंगा ।

पयडिअ समत्थभावो । केवली भावो जिणाण जत्थभावो ।
सोहन्ति सव्वओतहिं । महिमा जोयणमनिलकुमारा ॥ २ ॥

भावार्थ—तीर्थंकर भगवान् अपने कैवल्यज्ञान कैवल्यदर्शन द्वारा संपूर्ण लोकालोक के सकल पदार्थ को प्रगट हस्तामल की माफीक जाना देखा है उन तीर्थंकरों की विभूतिरूप समवसरण

अर्थात् जिस पवित्र भूमि पर तीर्थंकरों को कैवल्य ज्ञानोत्पन्न होता है वहाँपर देवता समवसरण कि दिव्य रचना करते है। जैसे वायुकुमार के देवता अपनी दिव्य वैक्रिय शक्ति द्वारा एक योजन प्रमाण भूमि मण्डल से तृण काष्ट कांटे कांकरे कचरा धूल मट्टी वगैरह अशुभ पदार्थों को दूर कर उस भूमि को शुद्ध स्वच्छ और पवित्र बना दिया करते है।

**वरसंति मेहकुमारा। सुरहिं जलं, रिऊसुरकुसुमपसरं।**
**विरयंति वण मणि कणय। रयण चित्त महि अलं तो ॥३॥**

भावार्थ—मेघकुमार के देवता एक योजन परिमित भूमि में अपनी दिव्य वैक्रिय शक्ति द्वारा स्वच्छ निर्मल शितल और सुगन्धित जल की वृष्टि करते है जिस से बारिक धूल-रंज उप-शान्त हो सम्पूर्ण मण्डल में शितलता छा जाती है। और ऋतु-देवता अर्थात् षट् ऋतु के अध्यक्ष देव षट् ऋतु के पैदा हुए पांच वर्ण के पुष्प जो जल से पैदा हुवे उत्पलादि कमल और थल से उत्पन्न हुए जाइ जूई चमेली और गुलाबादि वह भी स्वच्छ सुग-न्धित और ढीञ्चण ( जानु ) प्रमाण एक योजन के मण्डल में वृष्टि करते है और देवता उन पुष्पों द्वारा यथास्थान सुन्दर और मनोहर रचना करते है यथा समवायंग सूत्रे

"जलथलय भासुर पभूतेणं बिठंठाविय दसद्दवण्णेणं कुसु-मेणं जाणुस्सेहप्पमाण मित्ते पुप्फोवयारे किज्जई" प्रभु के चौंतीस अतिसय में यह अठारवां अतिशय है।

सिद्धान्तो में जल थल से उत्पन्न हूए पुष्पों का मूल पाठ होनेपर भी कितनेक महानुभाव उन पुष्पों को अचित बतलाते हुए कहते है कि वह पुष्प तो देवता वैक्रिय बनाते हैं। उन सज्जनों को सोचना चाहिए कि अगर वह पुष्प देवताओं के वैक्रिय बनाए हुए अचित होते तो शास्त्रकार जल थल से पैदा हुए नहीं कहते। इस से सिद्ध होता है कि समवसरण के अन्दर जो देवता पुष्पों की वृष्टि करते हैं वे जल थल से उत्पन्न हुए होनेके कारण वह पुष्प सचित हैं। अगर कोई सज्जन वनस्पतिकाय के जीवों का बचाव के लिए यह मन घटित कल्पना करले तो उन को सोचना चाहिए कि देवता पुष्प वैक्रिय बनाते है वह अठारा जाति के रत्नों को गृहन कर उन का मथन कर बादर पुद्गलों को छोड कर सुक्षम पुद्गलों के पुष्प बनाते हैं तो भी रत्न पृथ्वीकायमय है अगर वनस्पति के जीवों से बचोगे तो भी पृथ्वीकाय के जीवों की विराधना माननी पडेगी फिर भी वह वैक्रिय पुष्प एक योजन उपर से वरसने से भी असंख्य वायूकाय के जीवों की विराधना माननी पडेगी, इस से आप के अभिष्ट की तो किसी प्रकार से सिद्धी नहीं होती है फिर शास्त्रों के मूल पाठ को उत्थापन अर्थात् उत्सूत्र परूपना कर अनन्त संसारी बनने में क्या फायदा हुआ.

फिर भी देखिए 'उववाई' सूत्र में "वन्दणवत्तियाए पूअणवत्तियाए" वन्दना भाव पूजा और पुष्पादि से द्रव्य पूजा करना मूल पाठ है तथा "नन्दी" और "अनुयोगद्वार" में

" तिलुक्क महिया " अर्थात् तीर्थंकर भगवान तीन लोक में पुष्पादिसे पूजित हैं। और उववाई सूत्र में कोणिक राजाने भगवान के आगमन समय चम्पा नगरी को शृंगारी उस समय चारों और सुगन्धी जल से सिंचन कर पुष्पों के ढेर और फूलों की मालाओं से नगरी सुशोभित करवादी थी, वहांपर तो आप किसी प्रकार से वैक्रिय शक्ती द्वारा या अचित्त कह भी नहीं सक्के इत्यादि। सूत्रों के मूल पाठ से यह ही सिद्ध होता है कि समवसरण में जल, थल से पैदा हुए पुष्पों की रचना होती है वह पुष्प सचित है और ऐसा ही मानना मोक्षाभिलाषी जीवों को हितकारी है।

व्यन्तर देव अपनी दिव्य वैक्रिय शक्ती द्वारा मणि—चन्द्र-कान्तादि रत्न—इन्द्र नीलादि अर्थात् पांच प्रकार के मणि रत्नों से एक योजन भूमि मण्डल में चित्र विचित्र प्रकार से भूमि पिठीका की रचना करते हैं।

अभिंतर मज्ज बहि। ति वप्प मणि रयण कणय कवीसीसा।
रयणज्जुण रुथ मया। विमाणिय जोई भवण कया।

भावार्थ—पूर्वोक्त पांच प्रकार के मणि रत्नों से चित्र विचित्र मण्डित, जो एक योजन भूमिका है उसपर देवता समवसरण की दिव्य रचना करते हैं। जैसे—अभींतर, मध्य, और बाहिर एवं तीन गढ अर्थात् प्रकोट बना के उनकी भींतों (दिवारों) पर सुन्दर मनोहर कोसी से (कांगरों) की रचना करते हैं। जैसे कि—

( १ ) अभिंतर का प्रकोट रत्नों का होता है, उस पर मणि के कांगरे, और वैमानिक देव उस की रचना करते हैं ।

( २ ) मध्य का प्रकोट सुवर्ण का होता है, उस पर रत्नों के कोसी से ( कांगरे ) और ज्योतिषी देव उस की रचना करते हैं ।

( ३ ) बाहिर का प्रकोट चांदी का होता है, उस पर सोने के कांगरे, और उस की रचना भुवनपति देव करते हैं ।

इन तीनों प्रकोटों की सुन्दर रचना देवता अपनी वैक्रय-लब्धि और दिव्य चातुर्य द्वारा इस कदर करते है कि जिस की विभूती एक अलौकिक ही होती है, उस अलौकिकता को सिवाय केवली के वर्णन करनेकों असमर्थ है ।

वट्टंमि बतीसंगुल । तीतिस धणु पिहूल पण सय धणुच्च ।
छ धणुसय इग कोसं । तग्य रयण मय चऊ दारा ॥ ५ ॥

भावार्थ—समवसरण की रचना दो प्रकार की होती है । ( १ ) वृत–गोलाकार ( २ ) चौरांस–जिस में वृताकार समवसरण का प्रमाण कहते हैं कि समवसरण की भींते ३३ धनुष ३२ अंगूल की मूल में पहूली है, ऐसी छ भींते हैं पूर्वोक्त प्रमाण से गिनती करने से दो सौ धनुष होती है । और वह प्रत्येक भींत ५०० धनुष ऊंची होती है ।

छे भींते २०० धनुष्य

प्रकोट प्रकोट के अन्तर ७८०० धनुष्यका.

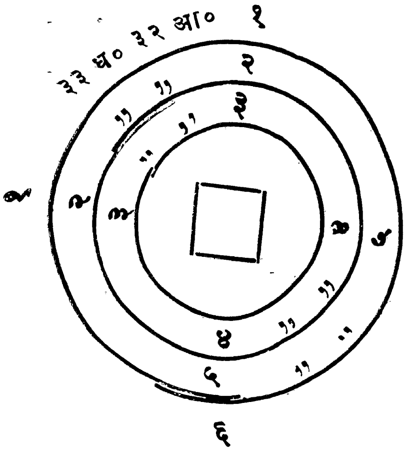


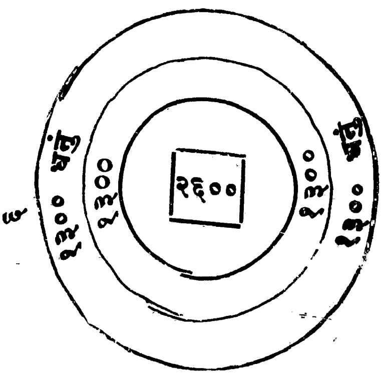


भिंते और प्रकोट का अन्तर सामिल करने से ८००० धनुष्य. अर्थात् एक योजन होता है.

अब प्रकोट २ के बीच में अंतर बतलाते हैं कि चांदी के प्रकोट और स्वर्ण के प्रकोट के बीच में ५००० सोवाणा अर्थात् पागोतीये होते हैं। प्रत्येक एक हाथ के ऊंचे और पहूले होने से १२५० धनुष के हुए और दरवाजे के पास ५० धनुष का परतर ( सम जगह ) एवं १३०० धनुष का अन्तर है। और स्वर्णप्रकोट और रत्नप्रकोट के बीच में भी पूर्वोक्त १३०० धनुष का अंतर है मध्य भाग में २६०० धनुष का मणिपिठ है। और दूसरी तरफ दोनों अन्तर का २६०० धनुष एवं २०० । २६००

२६०० । २६०० । कुल ८००० धनुष अर्थात् एक योजन हुआ, और चांदी के प्रकोट के बाहर जो १०००० पगोथिये हैं वे एक योजन से अलग समझना । प्रत्येक गढ के रत्नमय चार २ दरवाजे होते हैं । तथा भगवान के सिंहासन के भी १०००० पगोथिये होते हैं । भगवान के सिंहासन के मध्य भाग से पूर्वादि चारों दिशाओं में दो दो कोस का अंतर है वह चांदी का प्रकोटे के बाहर का प्रदेशतक समझना । वृत (गोल) समवसरण की परिधी तीन योजन १३३३ धनुष एक हाथ और आठ अंगूल की होती है । इस प्रकार वृत समवसरण का प्रमाण कहा अब चौरास का प्रमाण कहते हैं ।

चोरंसे एग धणु सय । पिहुवप्प सड्ढ कोसं अंतरिया ।
पढम बिय बिय तेइया कोसंतर पुव्वंमि विसेसं ॥ ६ ॥

भावार्थ—दूसरा चौरंस समवसरण की भींतें सौ २ धनुष की होती है, और चांदी सुवर्ण के प्रकोट का अंतर १५०० धनुष का तथा स्वर्ण व रत्नों के प्रकोट का अंतर १००० धनुष का एवं २५०० धनुष दूसरी तरफ तथा २६०० मध्य पीठिका और ४०० धनुष की दिवारें । २५०० । २५०० । २६०० । ४०० । कुल आठ हजार धनुष अर्थात् एक योजन समझना । शेष प्रकोट वगेरे, दरवाजे, पगोतिये वगेरा सर्वाधिकार पूर्वोक्त अर्थात् वृत समवसरण के माफिक समझना ।

सोवाण सहस दसकर । पिहुच्च गंतुं भुवोपढम वप्पो ।
तो पन्ना धणु पयरो । तओ अ सोवाण पण सहसा ॥७॥

तो बिअ वप्पो पणास धणु । पयग सोवाण सहसपण ततो ।
तईओ वप्पो छ सय । धणु ईग कोसेहिं तो पिढं ॥ ८ ॥

भावार्थ—अब प्रकोट ( गढ ) पर चढने के पगोथीयों का वर्णन करते हैं । पहिले गढ में जाने को सम धरती से चांदी के गढ के दरवाजे तक दश हजार पगोथीए हैं, और दरवाजे के पास जाने से ५० धनुष का सम परतर आता है । दूसरे प्रकोट पर जाने के लिए ५००० पांच हजार पगोथीये हैं । दरवाजा के पास ५० धनुष का सम परतर आता है और तीसरे गढ पर जाने के लिये ५००० पगोथिये है । और उस जगह २६०० धनुष का मणिपीठ चौतरा है । उस मणिपीठ से भगवान के सिंहासन तक जाने में भी दश हजार पगोथिए हैं ।

चउदारा तिसोवाणं । मज्झे मणि पिठयं जिणतणुच्चं ।
दो धणुसय पिहु दीहं । सड्ढ दुकोसेहिं धरणियला ॥६॥

भावार्थ—समवसरण के प्रत्येक गढ के चार २ दरवाजे हैं । और दरवाजों के आगे तीन २ सोवाण प्रति रूपक ( पगोथीये) है समवसरण के मध्य भाग में जो २६०० धनुष का मणिपीठ पूर्व कहा है उस के ऊपर दो हजार धनुष का लम्बा, चौडा और तीर्थंकरों के शरीर प्रमाण ऊंचा एक मणिपीठ नामक चौतरा होता है कि जिस पर धर्मनायक तीर्थंकर भगवान का सिंहासन रहता है । तथा धरती के तल से उस मणिपीठका के ऊपर का तला ढाई कोस का अर्थात् धरती से सिंहासन ढाई कोस ऊंचा

रहता है। कारण ५००० । ५००० । १०००० एवं वीस हजार सोपान हैं प्रत्येक एक २ हाथ के ऊंचे होने से ५००० धनुष का ढाई कोस होता है।

जिण तणु बार गणुचो । समहिअ जोअण पिहु आसोग तरू ।
तय होइ देवच्छंदो । चउ सिंहासण सपय पिढं ॥ १० ॥

भावार्थ——अब अशोक वृक्ष का वर्णन करते हैं। वर्तमान तिर्थंकरों के शरीर से बारह गुणा और साधिक योजन का लम्बा पहुला जिस अशोक वृक्ष की सघन शीतल और सुगंधित छाया है तथा फल फूल पत्रादि लक्ष्मी से सुशोभित है। पूर्वोक्त अशोक वृक्ष के नीचे बडा ही मनोहर रत्नमय एक देव छंदा है, उसपर चारों दिशा में सपाद पीठ चार रत्नमय सिंहासन हुआ करते हैं।

तदुवारि चउ छत तया । पडिरूवतिगंतहअ अठ्ठ चमरधरा ।
पुराओ कणय कुसेसय । ठिअफालिह धम्मचक्क चहु ॥ ११ ॥

भावार्थ——उन चारों सिंहासन अर्थात् प्रत्येक सिंहासन पर तीन २ छत्र हुआ करते हैं, पूर्व सन्मुख सिंहासन पर त्रैलोक्य नाथ तीर्थंकर भगवान बिराजते हैं, शेष दक्षिण, पश्चिम, और उत्तर दिशा में देवता तीर्थंकरों के प्रतिबिम्ब ( जिन प्रतिमा ) बिराजमान करते हैं। कारण चारों और रही हुई परिषदा अपने २ दिल में यही समझती हैं कि भगवान हमारी ओर ही बिराजमान है; अर्थात् किसीको भी निराश होना नहीं पडता है। इस बात के लिए जैनों के किसी भी फिरके का मतभेद नहीं है। सब

लोग मानते हैं कि भगवान चतुर्मुखी अर्थात् पूर्व सन्मुख आप खुद विराजते हैं। शेष तीन दिशाओं में देवता, भगवान के प्रतिबिंम्ब अर्थात् जिन प्रतिमा स्थापन करते है और वह चतुर्विध संघ को वन्दनिक पूजनिक है, जब भगवान के मौजूदगी में जिनप्रतिमा की इतनी जरूरत थी तब गेर मौजूदगी में जिन प्रतिमा की कितनी आवश्यकता हैं, वह पाठकगण स्वयं विचार कर सक्ते हैं। कितनेक अज्ञ लोग बिचारे भद्रिक जीवों को बहका देते हैं कि मंदिर मूर्तियों बारह काली में बनी है, उन को भी सोचना चाहिए कि जब तीर्थंकर अनादि है; तब मूर्तीपूजा भी अनादि स्वयं सिद्ध होती है। कितनेक अज्ञ भक्त यहां तक भी बोल उठते हैं कि यह तो भगवान का अतिशय था कि वे-चार मुख-वाले दिखाइ देते थे, उन महानुभावों को इस पुस्तक के अन्दर जो तीर्थंकरो के ३४ अतिशय बतलाये गए हैं उनको पढना चाहिए कि उस में यह अतिशय है या नहीं ? तो आपको साफ ज्ञात हो जायगा कि यह अतिशय नहीं है पर देवताओं के विराजमान किए हुए प्रतिबिम्ब अर्थात् जिन प्रतिमा है वह जिन तुल्य है; जितना लाभ, भाव जिन की सेवा उपासना से होता है उतना ही उनके प्रतिबिम्ब से होता है।

ज्जय छत्त मयर मंगलं। पंचालि दम वेई वर कलसे।
पई दारं मणि तोरण। तिय धुव घडी कुणंति वणा ॥१२॥

भावार्थ—समवसरण के प्रत्येक दरवाजे पर आकाश में

लहरे खाती हुई सपरवार से प्रवृत्त सुन्दर ध्वजा, छत्र, चमर मकरध्वज और अष्टमङ्गलिक यानी स्वस्तिक, श्रीवत्स, नन्दावृत, वर्द्धमान, भद्रासन, कुंभ, कलस, मच्छयुगल, और दर्पण एवं अष्ट मंगलिक तथा सुन्दर मनोहर विलास संयुक्त पूतलियों पुष्पों की सुगंधित मालायें, वेदिका और प्रधान कलस मणिमय तोरण; वह भी अनेक प्रकार के चित्रों से सुशोभित है और कृष्णागार धूप घटीए करके सम्पूर्ण मण्डल सुगन्धीमय होतें है यह सब उत्तम सामग्री व्यन्तर देवताओंकी बनाई हुई होती है।

जोयण सहस दण्डा। चउ ज्झया धम्म माण गय सींहं।
कुकुभई जुआ सव्वं। माण मिण निय निय करेणं ॥१३॥

भावार्थ—एक हजार योजन के उत्तंग दंड और अनेक लघु ध्वजा पताकाओं से मण्डित महेन्द्र ध्वज जिस के नाम धर्म ध्वज, माण ध्वज, गज ध्वज, और सींह ध्वज गगन के तलाको उलंघती हुई प्रत्येक दरवाजे स्थित रहै। कुंकुमादि शुभ और सुगन्धी पदार्थों के भी ढेर लगे हुए रहते है। विशेष समझने का यही है कि जो मान कहा है, वह सब आत्म अङ्गुल अर्थात् जिस जिस तीर्थंकरो का शासन हो उन के हाथों से ही समझना।

पविसिअ पूव्वाई पहु। पया हिणो पुव्व आसन निविठो।
पय पीठ ठविअ पाऊ। पणमिअ तित्थं कहइ धम्मं ॥१४॥

भावार्थ—समवसरण के पूर्व दरवाजे से तीर्थंकर भगवान समवसरण में प्रवेश करते हैं, प्रदिक्षणा पूर्वक पादपीठ पर पाँव

रखते हुए पूर्व सन्मुख सिंहासन पर विराजमान हो सबसे पहिले " नमो तित्थस्स " अर्थात् तीर्थको नमस्कार करके धर्मदेशना देते हैं ? अगर कोई सवाल करे कि तीर्थकर तीर्थ को नमस्कार क्यों करते हैं ? उत्तरमें ज्ञात हो कि—

(१) जिस तीर्थसे आप तीर्थंकर हुए इस लिए कृतार्थ भाव प्रदर्शित करते हैं। (२) आप इस तीर्थमें स्थित रह कर वीसस्थानक की सेवाभक्ती आराधन करके तीर्थंकर नामगौत्र कर्मोपार्ज्जन किया इस लिये तीर्थ को नमस्कार करते है । (३) इस तीर्थके अंदर अनेक तीर्थकरादि उत्तम पुरुष हैं इस लिये प्रत्येक मोक्षगामी अर्थात् तीर्थंकर तीर्थ को नमस्कार कर बाद अपनी देशना प्रारंभ करते हैं । (४) साधारण जनतामें विनय धर्म का प्रचार करनेके लिये इत्यादि कारणों से तीर्थंकर भगवान तीर्थ को नमस्कार करते है ।

मुणि विमाणिणि समणि। स भवण जोईवणदेवीदेवतियं ।
कप्प सुर नर त्थितियं । ठितीगोई विदिसासु ॥ १५ ॥

भावार्थ—-देशना सुननेवाली बारह परिषदा का वर्णन करते है, जो मुनि, वैमानिकदेवी, और साध्वी एवं तीन परिषदा अग्नि कोण में–भवनपति, ज्योतीषी व्यंतर इन की देवियों नैरूत्य कौण में–भवनपति, ज्योतीषी, व्यंतर ये तीनों देवता वायव्य कौण, वैमानिकदेव, मनुष्य, मनुष्यस्त्रीयो एवं तीन परिषदा ईशान कौण में । अतएवं बारह परिषदा चार विदिशामें स्थित रह कर धर्मदेशना सुनते हैं ।

चउ देवि समणि उठ ठिआ । निविट्ठा नरित्थिसुरसमणा ।
इअपण सग परिसासुणंति । देसणा पढम वप्पंतो ॥ १६ ॥

भावार्थ—पूर्वोक्त बारह परिषदा से चार प्रकार की देवांगना और साध्वी एवं पांच परिषदा खड़ी रह कर और शेष चार देवता नर नारी और साधु एवं सात परिषदा बैठ कर धर्मदेशना सुने । यह बारह परिषदा सब से पहिले, जो रत्नों का प्रकोट है, उस के अन्दर रह कर धर्मदेशना सुनते हैं ।

इअआवस्सय वीति वुतं । चुन्नियपुणमुणि निविठा ।
विमाणिअ समणी दो । उद्धसेसा ठिआउ नव ॥ १७ ॥

भावार्थ—पूर्वोक्त वर्णन आवश्यक वृति का है । फिर चूर्णिकारों का मत है कि मुनि परिषदा समवसरण में बैठ कर के तथा वैमानिक देवी और साध्वी खडी रह कर व्याख्यान सुनती हैं । और शेष नव परिषदा अनिश्चितपने अर्थात् बैठ कर या खडी रह कर भी तीर्थंकरों की धर्मदेशना सुन सके । तथा आवश्यक निर्युक्तिकारों का विशेष मत है कि पूर्व सन्मुख तीर्थंकर विराजते हैं । उन के चरणकमलों के पास अग्निकौन में मुख्य गणधर बैठते हैं और सामान्य केवली जिन तीर्थ प्रत्ये नमस्कार कर गणधरों के पीछे बैठते हैं उन के पीछे मनःपर्यवज्ञानी उन के पीछे वैमानिक देवी, और उन के बाद साध्वियों बैठती हैं । और साधु साध्वियों और वैमानिक देवियों एवं तीन परिषदा, पूर्व के दरवाजे से प्रवेश हो कर के, अग्निकौन में बैठे । भवनपति व्यन्तर व ज्योतीषियों की देवियों एवं तीन परिषदा दक्षिण दरवाजे से प्रवेश

हो कर नैरूत्य कौन में, पूर्वोक्त तीनों देव परिषदा पश्चिम दरवाजे से प्रवेश हो कर बायू कौन में और वैमानिक देव नर व नारी एवं तीन परिषदा उत्तर दरवाजे से प्रवेश हो कर के ईशान कौन में स्थित रह कर के व्याख्यान सुने, पर यह ख्याल में रहे कि मनुष्यों में अल्पऋद्धी महाऋद्धी का विचार अवश्य रहता है। अर्थात् वह परिषदा स्वयं प्रज्ञावान है कि वह अपनी २ योग्यतानुसार स्थानपर बैठ जाते हैं, परन्तु समवसरणमें राग द्वेष इर्षा मान अपमान लेश मात्र भी नहीं रहता है।

बिअन्तो तिरि ईसाणि। देव छंदाअ जाण तियन्ते।
तह चउरंसे दुदु वावि। कोणाओ वावि इक्कि का ॥ १८ ॥

भावार्थ —दूसरे स्वर्ण के प्रकोट में तिर्यञ्च अर्थात् सिंह-व्याघ्रादि, तथा हंस सारसादि पक्षी जाति वैरभाव रहित, शान्त चित से जिन देशना सुनते हैं। तथा वह इशान कौन में देवरचित देव छंद है। जब तीर्थंकर पहिले पहर में अपनी देशना समाप्त करने के बाद उत्तर के दरवाजे से उस देवछन्दे में पधारते हैं, तब दूसरे पहर में राजादि रचित सिंहासन पर बिराज के तथा पाद पीठ पर विराजमान हो गणधर महाराज देशना देते हैं।

तीसरे प्रकोट में हस्ती अश्व सुखपाल जाण रथ वगैरह सवारियों रखी जाती हैं, चौरस समवसरण में दो २ और वृतुल में एकेक सुन्दर वापियों ( वावडियों ) हुआ करती है; जिसमें स्वच्छ और निर्मल जल है।

पीअ सिअरत सामा । सुरवण जोई भवण रयण वप्पे ।
धणु दण्ड पास गय हत्था । सोम जय वारूण धणजक्खा ।१९।

भावार्थ—प्रथम रत्नों के गढ के दरवाजे पर एकेक देवता हाथ में श्रवध लिए प्रतिहार के रूप में खडे रहते हैं ।

( १ ) पूर्व दिशा के दरवाजे पर सुवर्ण कान्ती शरीरवाला सोमनामक वैमानिक देवता, हाथ में ध्वज लिए खडा रहता हैं ।

( २ ) दक्षिण के दरवाजे पर श्वेत वर्णमय यम नामक व्यन्तर देव हाथ में दण्ड लिआ हुआ दरवाजे पर खडा रहता है ।

( ३ ) पश्चिम के दरवाजे पर रक्त वर्ण शरीरवाला वारूण नामक ज्योतीषी देव हाथ में पास लिआ हुआ खडा रहता हैं ।

( ४ ) उत्तर के दरवाजे पर श्याम वर्णमय कुबेर (धनद) नामक भवनपति देव हाथ में गदा लिआ हुआ खडा रहता हैं । ये चारों देव समवसरण के रक्षार्थ खडे रहते हैं ।

जया विजया जिआ अपराजिअति । सिअअरूणपिय निल भा ।
बीए देवीज्जुअला । अभयंकूस पासमगर करा ॥ २० ॥

भावार्थ—दूसरे सुवर्ण प्रकोटे के प्रत्येक दरवाजे पर देवी युगल प्रतिहारके रूपमे स्थित हैं, जिनके नाम जया, विजया, अजिता, अपराजिता, क्रमशः उनके शरीर का वर्ण श्वेत, अरूण, ( लाल ) पीत, ( पीला ) और नीला हाथमें अभय अंकुश पास और मकरध्वज, नामके श्रवध ( शस्त्र ) है ।

तइअ बहिसुरा तुम्बरू । खट्टंगि कपालि जटमउड धारि ।
पुव्वाइ दारपाला । तुम्बरू देवोअ पडिहारो ॥ २१ ॥

भावार्थ—तीसरे चान्दी के प्रकोट के प्रत्येक दरवाजे पर प्रतिहार देवता होते है जिनके नाम तुम्बरू, खड्गी कपालिक, और झटमुकुटधारी, इन चारो देवताओं के हाथमें छडी रहती है, और शासन रक्षा करना इनका कर्तव्य है ।

समान्न समोसरणो । एस विही एइ जइ महढ्ढिसुरो ।
सव्व मिणं एगो विहु । सकुणई भयणो पर सुरेसु ॥ २२ ॥

भावार्थ—तीर्थकरों के समवसरण का शास्त्रों में बहुत विस्तार से वर्णन है, पर बालबोध के लिए इस लघु ग्रन्थ में सामान्य, (संक्षिप्त) वर्णन किया हैं। इस समवसरण की देवताओं का समूह अर्थात् इन्द्र के आदेश से चार प्रकार के देवता एकत्र हो कर रचना करते हैं। अगर महाऋद्धी सम्पन्न एक भी देवता चाहे तो पूर्वोक्त समवसरण की रचना कर सक्ता है तो अधिक का तो कहना ही क्या ? पर अल्पऋद्धीक देव के लिए भजना है,—वह करे या न भी कर सके।

पुव्व मजायं जत्थओ । जत्थई सुरो महढ्ढि मघवई ।
तत्थओ सरणं नियमा । सययं पुण पाडिहराई ॥ २३ ॥

भावार्थ—समवसरण की रचना किस स्थान पर होती है ? वह कहते हैं कि जहां तीर्थकरों को कैवल्य ज्ञानोत्पन्न होता

है वहां निश्चयात्मक समवसरण होता है और शेष पहिले जहांपर समवसरण की रचना नहीं हुइ हो अर्थात् जहांपर मिथ्यात्व का जोर हो अधर्म का साम्राज्य वर्त रहा हो, पाखण्डियों की प्रावल्यता हो, ऐसे क्षेत्र में भी देवता समवसरण की रचना अवश्य करते हैं। और जहांपर महाऋद्धिक देव और इन्द्रादि भगवान को वन्दन करने को आते हैं, वे भी देवता समवसरण की रचना करते हैं जिस से शासन का उद्योत, धर्म प्रचार और मिथ्यात्व का नाश होता है। शेष समय पृथ्वी पीठ और सुवर्णकमल की रचना निरन्तर हुआ करती है।

दुत्थिअ समत्थ अत्थिअ। जणपत्थिअ अत्थसुसमत्थो।
इत्थं थुओ लहु जणं। तित्थयरो कुणओ सुपयत्थं॥

भावार्थ— दुस्थितार्थ समस्त अर्थित जन व सर्व प्राणी प्रार्थित ऐसे अर्थ के लिए समर्थ यानि बालबोध के लिए यहां इस समवसरण द्वारा, स्तवनाकी जो शीघ्र–जल्दी जन प्रति श्री तीर्थंकर भगवान–करो सुपद स्थित अर्थात् हे प्रभु! हम संसारी जीवोंपर कृपा कर शीघ्र अक्षयपद दीरावे। इति.

इतिश्री समवसरण प्रकरण
समाप्तम्.

# गोडवाड़में गोबर का गौरव.

गोडवाड प्रान्त में गोबर का इतना गौरव है कि महाजनों की औरतों के सिवाय, इतर जातियों को तो इस सौभाग्य कार्य का अधिकार तकभी न रहा है; कारण इतर जातियों प्रतिदिन रूपैये आठ आने की मजूरी सहजही में कर लेती है। वह दो पैसे का गोबर के लिए बडी इज्जत का काम करना ठीक नहीं समझती है, पर हमारे महाजनों की औरतों मजूरी करने में अपनी इज्जत हलकी मानती है; और गोबर लाने में अपना विशेष गौरव समझती है।

गोडवाड़ के महाजन लोग भी इतने तो समझदार है कि सालभर में रूपैये दो रूपये का छाणा–बलीता का सहज ही में फायदा कर लेते हैं कारण औरतों घरमें बैठी बैठी करेगी क्या? सीवना पोवना गूंथना कांतना कसीदा विगेरह करे तो उस में बडा भारी कष्ट और पैदास कितनी? इस के बनिस्पत तो दिन में २–३ वार गोबर लाने को जावे तो अलबत पैसे दो पैसे का माल तो जरूर ले आवे। अगर घर में दर्जी बैठा सीलाई करता हो तो उस को मजुरी के सिवाय रोटी खिलाने में तो छाणे अवश्य काम आवेंगें! इस के सिवाय भी गोबर लाने वाली औरतों के गौरव और फायदे की तरफ जरा लक्ष दीजिए:—

(१) गोबर लानेवाली औरतों को नित्य नये कपड़े पहि-

नने को मिलते हैं कारण गोबर लाने को जाने वाली औरतों के दुगूने चौगुने कपड़े फटते हैं।

(२) गोबर लाने को जानेवाली औरतों को सालभर में एक दो नये जेवर भी पहिनने को जरूर मिलते है। कारण गोबर को जाने वाली एक दो गहने तो सालभर में जरूर गमा देती है।

(३) गोबर लानेवाली औरतों को भूख भी चौगुनी लगती हैं।

(४) गोबर लानेवाली औरतों के छोटे बाल बच्चे हो तो उनको धवराने के दुःखसे भी छुटकारा मिल जाता है क्यों कि गोबर के आगे बच्चों की क्या पर्वाह है।

(५) गोबर को जानेवाली लड़कीयों अध्यापिका के विगर ही टंटा फिसाद लड़ाइयों और असभ्य गालियों बोलने में इतनी तो होसीयार हो जाती है कि अगर परीक्षा ली जावे तो सर्टीफिकेट ( प्रशंसा पत्र ) अवश्य देना पड़े।

(६) गोबर लानेवाली औरतों को स्वच्छंदता सहज ही में मिल जाती है। रात्री में व दिन में किसी टाइममें कहीं जाती हो वह पीछी देरीसे आई हो तो उसको कोई कहनेवाला नहीं हैं कारण " कमाऊ पुत सब को प्यारा है "।

(७) गोबर लानेवाली औरतों की बाजे २ इज्जत का भी खतरा रहता है इतना ही नहीं पर भविष्य के लिए यह एक व्यभिचार का ठीक रास्ता है।

उपदेशक और मुनिराज कितनाही परिश्रम करें; उपदेश दें पर गोडवाड़ी लोग अपने चिरकालसे पड़े हूए संस्कार अर्थात् परम्परा को छोड़ने में वे अपनी इज्जत हल्की समझते हैं और जहांतक गोड़वाड़ में अविद्या का साम्राज्य रहेगा वहांतक गोड़-वाड़ की औरतों के हाथों में चाहे सोनेके बंगड़ी बाजूबंद क्यों न हो पर गोबर राजा तो उनके शिरके बालोंपर सवारी की मजा कभी नहीं छोडेगा जो कि कितनेक भोले भाले लोंगोंने मुनियों के उपदेश रूपी फंदमें आकर के अपनी औरतों को गोबर लाना छुड़वा दिया अर्थात् बड़ेरों की परम्परा को छोड दी पर हाल लकीर के फकीरों की भी कमी नहीं है। क्या गोडवाड़ अपने गौरव पर तनिक भी विचार करेंगें ?

इस के अलावा जानने काबिल कइ ऐसी कुरूढियां है कि इस वीसवी शताब्दि के सुधारक जमाना में सिवाय गोडवाड़ के उन का रक्षण पोषण होना मुश्किल है। जरा नमूना के तौर पर देखिये।

( १ ) महाजन एक दुनियां में बड़ी इज्जतदार कोम है उन की बहन बेटियों मैदान के बिच ढोल के डंके पर खुब हाव भाव और लटके के साथ नाच करती है कि जहाँ अनेक प्रकार के लोग खुब टीग टीगी लगा के देखा करते है उस समय उन दर्श-कों के कैसे परिणाम रहते होंगे ? समझ में नहीं आता है कि महाजनोंने इस नाच में अपनी कहांतक इज्जत समझ रखी होगी। अगर कोइ बहनों उपदेशको के सपाट में आ कर नाच से इन्कार

होती हो तो हमारी बुजर्ग माताओं उन को हुकम के जरिये जब-रन् नचाती है। यह कितना अज्ञान! अलबत, जमाना कि हवा लगने से कुच्छ सुधारा जरूर हुआ है पर अभीतक गाँवडों में इस रूढि के गुलामों की कमती नहीं है अतएव इस कुरूढि को मिटाना जरूरी है कारण यह एक व्यभिचार का खास रास्ता है।

( २ ) लग्न सादियों में असभ्य और निर्लज्ज गालियों की प्रथा भी इस प्रान्त में बडी जोर शोर से प्रचलित है कइ कइ जगह तो विचारी वैश्याओं को भी सरमाने जैसी गालियों गाई जाति है और उन के बाल बच्चों के कोमल हृदय पर इतना बुरा असर पडता है कि वह बालब्रह्मचारी के बदले बाल व्यभिचारी बन जाते है। छोटी छोटी बालिकाएं रजस्वलाधर्म को प्राप्त हो जाति है इस का भी मुख्य कारण वह खराब गालियां है। बालकों को व्यभिचारी बनाने में उन के घर स्कूल और माताए अध्यापिका है अगर अपने बाल बच्चों को सदाचारी दीर्घायु और वीर बनाना हो तो सब से पहले इस कुरूढि को जलाञ्जली दे दिजिये। आप के सगा गनायतों और जमाइयो के दील को रंजन ही करना हो तो अपनी बहन बेटियों को सदाचार और वीरता की गालियां सिखाइये कि जिन से आप की संतान सदाचारी और वीर बने।

( ३ ) पाणी के सरवा-गोडवाड़ में प्रायः यह रिवाज है कि जिस लोटा-गीलाससे पाणी पीया हो वह ही लोटा फीर बरतन (माटा) में डाल देगें कि वह सब पाणी झूठा हो जायगा।

जिसके जरिये अनेक प्रकार के चेपी रोग पैदा हो जाते हैं। उस पाणीमे असंख्य समुर्च्छिम मनुष्योत्पन्न हो जाते है। अच्छा आदमि उनके वहाँ का पाणी पीनेमें हीचकते है वह ही पाणी गरमकर साधु साध्वियों को दान देते है यह कितना अज्ञान है? अगर किसी जीमणवारमें देखा हो तो भला आदमि वहाँ भोजन करना भी अच्छा नहीं समझते है इत्यादि। यद्यपि उपदेशकों के उपदेशसे इस प्रथामें सुधारा हुआ है तथापि जहाँ सरवे नहीं है उनको शीघ्र करवा लेना चाहिये।

( ४ ) महाजनों के न्याति जीमणवारोमें भी अभी बहुत सुधारा कि जरूरत है। रसोई बनानेवाले ब्राह्मण वगैरह उच्च जातिवान होना चाहिये कि जिसकी बनाई रसोई सब लोग विगर संकोच जीम सके। पुरसगारों के लिये भी अच्छा इन्तजाम हो कि वालेंटर वगैरह ठीक तजवीजसे पुरसगारी करे कि अपनी बहन बेटियों अच्छी इज्जत व योग्यतासर बेठ के भोजन कर ले, विशेष झूठा न रहे। पाणी वगैरह की शुद्धतापर ठीक ख्याल किया जाय.

(५) शरीर स्वास्थ्य की और गोडवाड़ प्रान्त का लक्ष बहुत कम है जिसमें भी बाल बच्चों की आरोग्यता के लिये तो बड़ा ही अन्धेर है जिसके बालक नहीं है वह तो बाबा, गुसांई, मुल्लांपीर या अनेक देवी देवताओं की मान्यता के भ्रममें भ्रमन किया करते है और जिनके बाल बच्चा है वह उनके रक्षण कों एक किस्म की वेगार समझते है। धनाड्यों के लडकाओं के शरीरपर आधासेर सोना मिल जावेंगें पर उनके आरोग्यता का एक

भी साधन दृष्टिगोचर न होगा. बालकों का स्वास्थ्य तो दूर रहा पर वह खुद अपने शरीर की भी परवाह नहीं रक्खते है । इसी कारण बाल मृत्यु और विधवाओं कि संख्या जितनी इस प्रान्तमें है उतनी स्यात् ही किसी अन्य प्रान्तमें होगी अतएव गेहना कपडा कि निस्वत बालकों के आरोग्यतापर अधिक ख्याल रखना चाहिये कारण इस बालकोपर आप के संसार का आधार है।

(६) कन्याविक्रय भी जितना इस प्रान्त में है ऐसा किसी प्रान्तमे शायद् ही होगा, जो लोग छाने चुपके हजार पांचसौ रूपये लेते थे वह आज चौडे मैदानमें निःशंक पणे पांच दश हजार रूपैये लेना तो साधारण बात समझते है। कन्या विक्रय का बजार इतना तो गर्म हो गया कि चालीस पचास हजार तक पहुँच गया इसी कारण से हजारों युवक कुँवारे पितर होते है । आज कल वरविक्रय (डोरा) का बजार भी बहुत तेजी पर जा पहुँचा है। साधारण आदमि तो एकाद लडकि का विवाह में ही अपना सर्वस्व होम देते है। अगर इस दुष्टाचरणोंमें सुधार न किया जाय तो भविष्यमें इसका परिणाम बहुत बुरा होगा । जाति अग्रेसरों को जल्दी से सावचेत हो जाना चाहिये ।

(७) गोडवाड़ में पंचतीर्थी और पुराणे मन्दिर बहुत है और उनकी सेवा-भक्ति श्रद्धा भी बहुत अच्छी है जिसकी बदोलत ही आज गोडवाड़ सब तरह से हराभरा ( सुखी ) है जो कुच्छ त्रुटी कही जाय तो मन्दिर पूजाने कि है कारण गोडवाड़ के लोग आज कल शेठजी बन बेठे है, आप से न तो भगवान् का

प्रक्षाल होता है न अंगलुणा होता है न देखरेख करने को टाइम मिलता है। कितनेक तो मन्दिर के बाहर खडे हो दर्शन कर लेते है और कितने क घसी हुई केसर तय्यार मीजने से भगवान् के चरण टीकी लगाके कृतार्थ बन जाते है विधर्मी नौकार पूजारी चाहे कितनी आशातना करे पर परवाह किस कों ? इतनी ही देव-द्रव्य का अशातना ( नुकशांन ) हो रहा है, सोचना चाहिये कि जिसकी बदोलत से हम सुखी हुए है और उनकी ही अशातना होना हमारे लिये कितनी बुरी है। अतएव प्रभुपूजा और देव द्रव्य की सुन्दर विवस्था होना बहुत जरूरी बात है।

(८) विद्या प्रचार—आज भारत के कोने कोने से अविद्या के थांणे उठ गये है पर न जाने गोडवाड़ से ही अविद्या का इतना प्रेम क्यों है कि वह इसको छोडना नहीं चाहाती है। गोडवाड़ी लोगों को विद्या की और इतनी तो अरूची है कि एक सौ पांच डिगरी बुखारवाला को जितनी अन्नपर अरूची होती है। फिर भी उपदेशकों के जोर जुलम ( परिश्रम ) से कितनेक ग्रामोंमे पाठशालाए दृष्टिगोचर होती है पर उनकी देखरेख सारसंभाल के अभाव जितना द्रव्य व्यय किया जाता है उतना लाभ नहीं है। इस समय विद्याप्रेमि जैनाचार्य श्रीमद्विजयवल्लभसूरिजी तथा पन्यासजी श्री ललितविजयजी महाराज और कितने ही विद्याभिलाषी गोड़वाड के अग्रेसरों के प्रयत्न से श्री वरकांणा तीर्थ पर ' श्री पार्श्वनाथ जैन विद्यालय ' नामक संस्थाका जन्म हुआ है। हमारे गोडवाड़ के अग्रेसर सज्जन इस आदर्श संस्था कि सेवा–भक्ति और उपासना

कर दिन व दिन उत्तेजन देते रहेंगे तो उम्मेद है कि यह संस्था गोडवाड़ का अज्ञान को समूल नष्ट कर अपने दिव्य ज्ञान का प्रकाश डाल गोडवाड़ का जरूर उद्धार करेंगी. पर हमारे गोड-वाड़ी भाइयों को इतना से ही संतोष कर नहीं बैठ जाना चाहिये जैसे लडकों के लिये विद्यालय कि स्थापना कि है वैसे ही एक लडकियों के लिये भी महा विद्यालय कि अत्यावश्यक्ता है कारण जहाँतक भावि माताओं को शिक्षा न दि जाय वहाँतक उनका घर और भावि संतान का सुधार न होगा, अतएव कन्याशाला कि भी गोडवाड़ में सब से पहले जरूरत है। किमधिकम्।

(६) अच्छूतों कि गाडियों वगैरह कइ कइ ऐसी बातें है कि जिसका परित्याग करना बहुत जरूरी बातें है.

आपका

"शुभचिंतक"

# जाहिर खबर.

| | | |
|---|---|---|
| (१) | शीघ्रबोध भाग १ से २५ तक | कि. ६-०-० |
| (२) | ज्ञानविलास ( २५ पुस्तके एक जिल्दमे, | १-८-० |
| (३) | जैन जाति निर्णय प्रथमद्वितीय अंक | ०-६-० |
| (४) | शुभमुहूर्त-शुकन स्वरोदय यंत्रमंत्र वगैरह | ०-३-० |
| (५) | ओसवाल ज्ञाति समय निर्णय | ०-३-० |
| (६) | धर्मवीर जिनदत्त शेठ ( कथा ) | ०-३-० |
| (७) | उपकेश ( ओसवाल ) पद्यमय इतिहास | ०-१-० |
| (८) | सादडी के तपागच्छ और लुंकामत० दिग्दर्शन | ०-४-० |
| (९) | मुखवस्त्रिकां नि० निरीक्षण | ०-१-० |
| (१०) | तस्करवृत्ति का नमूना | ०-१-० |
| (११) | पंच प्रतिक्रमण सूत्र, पक्का पुंठा | ०-४-० |
| (१२) | जैन जातियों का सचित्र इतिहास | ०-४-० |
| (१३) | क्या जैन जातियों कमजोर है ? | ०-३-० |
| (१४) | कर्मग्रन्थ हिन्दी अनुवाद सहित | ०-४-० |
| (१५) | नयचक्रसार हिन्दी अनुवाद सहित | ०-८-० |

शेष पुस्तकों के लिये सूचीपत्र मंगवाईये

पुस्तक मिलने का पत्ता

**श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला.**

मु. फलोदी ( मारवाड )